नेहरू ने ही दिखाया विकास का मार्ग

- **आदित्य मुखर्जी**
  वरिष्ठ लेखक

देश की आजादी से लेकर 1964 में अपने निधन तक नेहरू अपने प्रेरक नेतृत्व के जरिये देश को धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र के रास्ते पर पूरी दृढ़ता के साथ बनाए रखने में सफल रहे और आजादी के ठीक बाद आर्थिक दृष्टि से उन सर्वाधिक मुश्किल वर्षों के दौरानभी नेहरू के प्रयासों से भारत दुनिया में एक संप्रभु, मानवीय और साम्राज्यवाद विरोधी देश के रूप में स्थापित हो सका। अर्थव्यवस्था में नेहरू के योगदान के बारे में अल्प-ज्ञान वाले हिंदुत्ववादी तो भ्रम फैलाते ही रहते हैं, लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स केतीर्थंकर रॉय और लॉर्ड मेघनाद देसाई जैसे चंद विद्वान भी प्रतिकूल टिप्पणी करते हैं। ये विद्वान नेहरू काल समेत आजादी के बाद के चालीस साल, जो नेहरू की नीतियों से प्रभावित थे, को आर्थिक नजरिये से विफल कालखंड करार देते हैं। औपनिवेशिककाल के वैश्वीकरण और 1991 में भारत द्वारा अपनाए गए वैश्वीकरण की तुलना करते हुए ये विद्वान नेहरू के काल को एक अवरोध के तौर पर पेश करते हैं। लेकिन ऐसा निष्कर्ष निकालना ऐतिहासिक और तथ्यात्मक दृष्टि से सर्वथा गलत है।

यह जवाहरलाल नेहरू को खलनायक बताने का दौर है। आज भारत जितनी भी समस्या से दो-चार हो रहाहै, उसका ठीकरा नेहरू पर फोड़ने का चलन है। कश्मीर से लेकर सांप्रदायिक हिंसा, कृषि से लेकर आजादी के बाद के शुरुआती दशकों के दौरान विकास की कथित धीमी रफ्तार, हमारी शिक्षा पद्धति से जुड़ी समस्याओं; कुछ लोग इन सबके लिए नेहरू की गलत नीतियों को दोषी ठहराते हैं। आलम यह है कि सांप्रदायिक हिंदुत्व ब्रिगेड गला फाड़कर यह बताने में जुटा है कि तब अगर नेहरू के हाथों में देश की कमान नहीं होती तो आज स्थिति कहीं बेहतर होती । इस तर्क को एक अलग ही स्तर तक ले जाते हुए एक हिंदुवादी नेता कहते हैं कि महात्मा गांधी की जान लेने वाली गोलियों का निशाना तो दरअसल नेहरू को होना चाहिए था। इस तरह की बातें उस व्यक्ति के बारे में कही जा रही हैं जिसने उस भारतीय अवधारणा को व्यवहार में उतारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिसकी भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं ने लगभग सौ वर्षों के संघर्ष के दौरान कल्पना की थी। इस अवधारणा के आधारभूत सिद्धांत थे भारत की संप्रभुता और साम्राज्यवाद-विरोध; लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता तथा गरीबों की सुध लेने का नीतिगत दृष्टिकोण। देश की आजादी से लेकर 1964 में अपने निधन तक नेहरू अपने प्रेरक नेतृत्व के जरिये देश को धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र के रास्ते पर पूरी दृढ़ता के साथ बनाए रखने में सफल रहे और आजादी के ठीक बाद उन सर्वाधिक मुश्किल वर्षों के दौरान भी नेहरू के प्रयासों

से भारत दुनिया में एक संप्रभु, मानवीय और साम्राज्यवाद विरोधी देश के रूप में स्थापित हो सका। अर्थव्यवस्था में नेहरू के योगदान के बारे में अल्प-ज्ञान वाले हिंदुत्ववादी तो भ्रम फैलाते ही रहते हैं, लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स के तीर्थंकर रॉय और लॉर्ड मेघनाद देसाई जैसे चंद विद्वान भी प्रतिकल टिप्पणी करते हैं। ये विद्वान नेहरू काल समेत आजादी के बाद के चालीस साल, जो नेहरू की नीतियों से प्रभावित थे, को विफल कालखंड करार देते हैं। औपनिवेशिक काल के वैश्वीकरण और 1991 में भारत द्वारा अपनाए गए वैश्वीकरण की तुलना करते हुए ये विद्वान नेहरू के काल को एक अवरोध के तौर पर पेश करते हैं। लेकिन ऐसा निष्कर्ष निकालना ऐतिहासिक और तथ्यात्मक दृष्टि से सर्वथा गलत है। औपनिवेशिक काल में वैश्वीकरण से भारत को लाभ तो छोड़िए, बड़ा नुकसान हुआ था। 18वींशताब्दी के शुरू में भारत की अर्थव्यवस्था दुनिया में सबसे बड़ी थी और वैश्विक जीडीपी में इसकी भागीदारी करीब 25 फीसदी थी और तब के ब्रिटेन की तुलना में यह आठ गण ज्यादा थी। जबकि दो सौ साल के औपनिवेशिक वैश्वीकरण के बाद जब अंग्ज रे गए तो 1950 में वैश्विक जीडीपी में भारत की भागीदारी घटकर पांच फीसदी से भी नीचे रह गईथी और यह ब्रिटेन की तुलना में दो तिहाई से भी कम रह गई थी। 1950 में अंग्जों के जाने के बादजब भारत पीछे छोड़े गए “कचरे और गंदगी...निपटगरीबी” (टैगोर के शब्द) से जूझ रहा था, भारत वैसे ही वैश्वीकरण के दौर से गुजर रहा था जैसा उसने बाद में 1991 में देखा और तब इसका बड़ा खतरा था कि भारत एक अस्तित्वहीन कमजोर देश बनकर रह जाता। यह नेहरू के नेतृत्व में किए गए अथक प्रयासों का ही नतीजा था कि भारत आजादी के बाद के दशकों के दौरान विरासत में चली आ रही औपनिवेशिक संरचना को तोड़ने में सफल हो सका और उस समय डाली गई बुनियाद ही वह माहौल बना सकी कि 1990 के दशक में भारत वैश्वीकरण प्रक्रिया में अपनी संप्रभुता और संसाधनों से बिना समझौता किए एक लाभ की स्थिति में शामिल हो सका, न कि हाथ फैलाए, जैसा उपनिवेश काल में हुआ था। औपनिवेशिक शासन से आजाद हुए अन्य देशों को भी आजादी मिलने के बाद वैश्विक अर्थव्यवस्था का हिस्सा बनने के लिए इस खाई को पाटना पड़ा था और अमूमन इसमें दशकों लग गए। यह कोई दुर्घटना नहीं थी कि चीन भी अपनी आजादी के लगभग तीन दशक बाद 1978 में जाकर वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़ सका। अब मैं अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में नेहरू की चंद उपलब्धियों का जिक्र करूंगा। हाल के समय में भारत ने जिस तरह का तेज विकास देखा, वह नेहरू के ‘बावजूद’ नहीं बल्कि नेहरू के ‘कारण ही’ संभव हो सका। जब भारत को आजादी मिली, औपनिवेशिक बाध्यताओं के कारण ऐसी स्थिति हो गई थी कि किसी भी निवेश के लिए जरूरी पूंजीगत वस्तुओं और तकनीक के लिए हम पूरी तरह दूसरे देशों पर निर्भर थे। हम किसी भी पूंजीगत वस्तु का उत्पादन नहीं करते थे। 1950 में मशीनों और यहां तक कि मशीनों के औजारों की लगभग 90 फीसदी जरूरतों के लिए हम आयात पर निर्भर थे। यानी, राजनीतिक स्वतंत्रता

प्राप्त करने के बाद भी निवेश आधारित किसी भी विकास के जरिये आर्क थि विकास के लिए भारत पूर्णतः अन्य देशों के रहमो करम पर था। यह नव-औपनिवेशिक जैसी स्थिति थी और इसकी तत्काल काट जरूरी थी। इसी को ध्यान में रखते हुए नेहरू ने भारी उद्योग या पूंजीगत वस्तु उद्योग आधारित औद्योगीकरण का रास्ता अपनाया। पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं (1951-65) के दौरान भारत में उद्योग 7.1 फीसदी सालाना की रफ्तार से बढ़े। 1951 से 1969 के बीच औद्योगिक उत्पादन सूचकांक में तीन गनुा वृद्धि उपभोक्ता वस्तु उद्योग में 70 प्रतिशत बढ़ोतरी, मध्यवर्ती माल के उत्पादन मेंएक चौथाई वृद्धि और पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन में दस गनुा वृद्धि का परिणाम थी। औद्योगिक विकास के इस पैटर्न के कारण निराशाजनक औपनिवेशिक विरासत को बदला जा सका। ऐसी स्थिति से, जहां भारत में पूंजी निवेश के लिए, वस्तुतः 90 फीसदी उपकरणों का आयात करना पड़ता था, 1960 में यह घटकर 43 प्रतिशत और 1974 में 9 फीसदी रह गया था। यह एक बड़ी उपलब्धि थी क्योंकि इससे भारत को अपनी विकास दर खुद तय करने की स्वायत्तता मिली और इसी वजह से दुनिया की दो-ध्वीय शरुक्ति व्यवस्था में बिना किसी ओर झुके भारत अपना स्थान मजबूत कर सका और फिर निरट आंदोलन के लिए माकूल स्थितियां बन सकीं। आजादी के समय भारत की अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र की भागीदारी बहुत कम थी और पूंजीगत उत्पाद उद्योग के विकास के भारी-भरकम काम के लिए सार्वजनिक क्षेत्र ही एक विकल्प बचता था। इस क्षेत्र का विकास विदेशी पूंजी के जरियेकरने का विकल्प नहीं था क्योंकि नेहरू की सोच थीकि देश की संप्रभुता तभी बरकरार रखी जा सकती है जब औद्योगिक विकास मुख्यतः अपने बूते किया जाए। भारत की संप्रभुता और एक गुटनिरपेक्ष देश बने रहने के लिए एक बड़ी चिंता थी देश की खाद्य सुरक्षा। अंग्जी राज में भारतीय कृषि का गला घोंटा जा चुका था और इसकी हालत लगातार खस्ता होती जा रही थी और आजादी के बाद भारत के सामने खाने का गंभीर संकट था और तमाम क्षेत्र अकाल जैसी स्थिति से जूझ रहे थे। हालत यह थी कि 1946 से 1953 के बीच 1.4 करोड़ टन अनाज का आयात करना पड़ा। अगर भारत को जिंदा रहने के लिए दूसरे देशों से अनाज मदद पर निर्भर रहना पड़ता तो संप्रुभता का कोई मतलब नहीं रह जाता। कृषि में क्रांति की जरूरत थी और नेहरू ने इस चुनौती का सामना युद्ध स्तर पर किया। अक्सर यह भ्रम फैलाया जाता है कि नेहरू ने औद्योगीकरण पर ध्यान देने के चक्कर में कृषि क्षेत्र को नजरअंदाज कर दिया। जबकि हकीकत यह है कि भूमि सुधार जैसे संस्थागत बदलावों और सरकार की ओर से खेती में आधुनिक तकनीक लाने के प्रयासों के कारण भारतीय कृषि की शक्ल बड़ी तेजी से बेहतर हुई। पहली तीन योजनाओं (1965-66 को छोड़कर जब अकाल आया था) के दौरान कृषि क्षेत्र सालाना 3 फीसदी से अधिक की दर से बढ़ा जबकि अंग्जी रे शासन के अंतिम 50 साल यानी 1891 से 1946 के दौरान कृषि क्षेत्र की सालाना विकास दर 0.37 फीसदी रही थी। इस तरह नेहरू ने न केवल

कृषिक्षेत्र में संस्थागत बदलाव किए बल्कि तकनीकी सुधारकी भी बुनियाद रखी जो आगे चलकर हरित क्रांति का आधार बना और जिसके कारण भारत थोड़े समय में ही जरूरत से अधिक अनाज का उत्पादन करने लगा। अब बात ज्ञान क्रांति की। नेहरू ने यह बात समझली थी कि वैश्विक पूंजीवाद में औद्योगीकरण के बादके चरण में उत्पादन के मामले में ज्ञान अहम भूमिकानिभाने वाला है। नेहरू इस बात के लिए कृतसंकल्पथे कि भारत इस मौके का फायदा उठाने से न चूकेजैसा औपनिवेशिक काल में आई औद्योगिक तथाकृषि क्रांति का लाभ उठाने से वंचित रह गया था।अंग्जी राज में विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में भारतको जान-बूझकर पिछड़ा रखा गया था और नेहरूने इस स्थिति को बदलने के लिए जबर्दस्त प्रयासकिए। नेहरू मानते थे कि देश को सही मायने मेंसंप्रभु बनाने के लिए विज्ञान शिक्षा के मामले में दूसरेदेशों पर निर्भरता को कम करना बेहद जरूरी था औरइसके लिए उन्होंने सामाजिक ताने-बाने में वैज्ञानिकसमझ-बूझ को बढ़ावा देने के साथ उच्च शैक्षणिकस्तर पर भी विज्ञान को खासी तरजीह दी। आईआईटी, सीएसआईआर, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, नेशनल फिजिकल एंड केमिकल लैबोरेटरीज, एम्स जैसे तमाम अग्रणी संस्थान नेहरू काल में ही शुरू हुए। हर पंचवर्षीय योजना में वैज्ञानिक अनुसंधान और विकास के लिए बजट बढ़ता गया और आज भारत नेहरू की उसी दूरदर्शिता की फसल काट रहा है। अक्सर यह माना जाता है कि नेहरू ने प्राथमिक शिक्षा से समझौता किया, जबकि स्थिति इसके ठीक उलट है। वैज्ञानिक शिक्षा को बढ़ावा देने की प्राथमिकता पर चलते हुए प्राथमिक शिक्षा भी नेहरू के लिए महत्वपूर्ण रही। हकीकत तो यह है कि प्राथमिक शिक्षा पर उनकाजोर तो 1931 से ही था जब उन्होंने कराची प्रस्ताव काम सौदा तैयार किया था। मसौदे में उन्होंने यह प्रावधान किया था कि प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य हो और सरकार की ओर से यह मुफ्त में उपलब्ध कराई जाए। आज की शिक्षा नेहरू काल की सरकारी प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था से एकदम दूर हो गई है और आज गरीबों को भी अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए निजी क्षेत्र पर निर्भर रहने को मजबूर होना पड़ रहा है। नेहरू को बदनाम करने के लिए आज के कागजी शेर भारत की अवधारणा को ही नष्ट करने में लगे हैं। देश के धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक चरित्र ही नहीं बल्कि आर्क और राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ बुरी तरह से समझौता किया जा रहा है और बुद्धिजीवियों के साथ-साथ शिक्षा व्यवस्था के खिलाफ ही युद्ध छेड़ दिया गया है। आज की सबसे बड़ी जरूरत नेहरूवादी सोच और लक्ष्यों को पुनर्जीवित करना है।

प्रस्तुति मनुज फीचर सर्विस